Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 7.671
January to March 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLV

भारतीय नारी जगत एवं श्री कृष्ण की भूमिका एवं मान्यता

डॉ. रमा आमेटा*

* सहायक आचार्य (संस्कृत) विद्या सम्बल योजना राजकीय महाविद्यालय, वल्लभनगर, उदयपुर (राज.) भारत

प्रस्तावना – भारतीय संस्कृति में नारी जीवन की जो अक्षुण्ण महत्ता रही हैए उसकी अपनी एक परम्परा और उसका अपना एक सुदीर्घकालिक इतिहास रहा है। वाल्मीकि से पूर्व उसे जिस महनीय रूप में देखा जाता रहाए उसकी संक्षिप्त रूपरेखा राजा दशरथ और राम के जीवन में मिलता है। यद्यपि वाल्मीकि के बाद महाभारत का एक ऐसा अवश्य क्षुब्ध समय आयाए जिसमें उसकी उपेक्षा दिखाई देती है। राज्य लिप्सा में पूरी तरह डूबे कौरव अपनी स्वार्थान्धता में सने पगे अपने ही पारम्परिक आचरण को एक ओर धकेल कर अपने जीवन में उत्सव मना रहे थे और पापाचरण की सीमा को लाँघकर अपनी सनातन परम्परा को ठुकरा रहे थेए तथा यह समझते हुए भी कि उनकी यह गति एक दिन उनकी दुर्गति का कारण बनेगी, अपने को रोक नहीं पा रहे थे।

गीता के अर्थ की सार्थकता – लगता है की महाभारतकालीन इस सांस्कृतिक दुर्घटना को ही श्रीकृष्ण के समय में धर्म की ग्लानि माना होगा और जिसके परिणाम सामने आयेए उन्हें गीता के शब्दों में 'परित्राणाय साधुनां' तथा 'विनाशाय च दुष्कृतां' एवं 'धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे' जैसे सिद्धांत–गत वचनों की अभिव्यक्ति सामने आई होगी।

नारी–जीवन में चरम पतन की जो यह स्थिति सामने आईए प्रतीत होता है, श्रीकृष्ण का जन्म इसी संकट के निवारण के सन्दर्भ में हुआ है। यद्यपि यह एक ऐतिहासिक सन्दर्भ है, किन्तु महाभारत की रचना के बाद वेदव्यास की सृजन–पक्ष में रही अशन्ति बेचैनी या खिन्नता इस तथ्य को पर्याप्त आधार देती दिखाई देती है कि महाभारत की रचना के बाद वे ऐसे किसी विषय को अपने लेखन के क्षेत्र में स्पर्श करना चाहते थेए जिससे उनके मानस को 'महाभारत' की रचना के बाद भी सृजन में जो असन्तुष्टि या अतृप्ति बनी रहीए उसे दूर किया जा सकेए तथा उनकी यह अतृप्ति श्रीमद्भागवत जैसे पुराण की रचना से ही निश्चित दूर हुई होगी ऐसा प्रतीत होता है। इतिहासकार अपने अध्ययन–अनुशीलन के आधार पर श्रीमद्भागवत काए भारतीय परम्परा के अनुसार, रचना–काल पाँच हजार वर्ष पूर्व का मानते हैं।

श्रीमद्भागवत की रचना का महत्त्व – माना जा सकता है कि 'श्रीमद्भागवत महापुराण'की रचना को लेकर वेदव्यासजी की जो मानसिक चेतना रही, वह नारी–जीवन के प्रति उनकी घनीभूत सहानुभूति ही रही, जिसका उदय श्रीकृष्ण का नारी जीवन के प्रति अनन्य उत्कट प्रेम के रूप में हुआ। नारी–जीवन के प्रति श्रीकृष्ण का यह अनन्य जागा उत्कट प्रेम ही उनके जन्म की घटना से जुड़ा एक रहस्य कहा जा सकता हैए जिसे हम भारतीय इतिहास की एक रोचक घटना के रूप में देखते रहे हैं।

श्रीकृष्ण का जन्म द्वापर युग में हुआ था और वह समय भी कंस जैसे अत्याचारियों के दुराचरणों से व्याप्त था। यही कारण रहा कि श्रीकृष्ण का जन्म कारावास में हुआ तथा वसुदेव और देवकी को उनके जन्म की प्रतीक्षा में बरसों का समय कारावास में काटना पड़ा था। देवकी, जो कंस की बहन थी, और जो एक नारी थी, उसे भी जब कारावास की यातना लम्बे समय तक भुगतनी पड़ी, नारी के लिये एक विपरीत समय का ही वातावरण था, जिसे वसुदेव ने भारी बरसात की आधी रात में, यमुना पारकर, गोकुल गाँव में पहुँचकर बिताने का अथक उद्यम किया था।

वस्तुत: वह समय नारी–जीवन के लिये एक अभिशाप ही था, जिसे श्रीकृष्ण ने अपने समय का एक अधर्म समझकर उसे धर्म–स्थापना के रूप में बदलने का प्रयास किया था। उदाहरण के रूप में यहाँ कंस के कुत्सित शासनकाल की एक और रोचक घटना प्रस्तुत है, जिसमें कुब्जा के देह को श्रीकृष्ण द्वारा स्वस्थ–सुन्दर बनाने की घटना का सुखद वृत्तान्त दिया गया है।

कुब्जा के जीवन की घटना –मथुरा में असुरों द्वारा छल–छद्म के रूप में एक धनुष यज्ञ का आयोजन रखा गया था और उसमें श्रीकृष्ण को भी आमंत्रित किया गया। उस समारोह में भाग लेने हेतु श्रीकृष्ण मथुरा नगर में जा ही रहे थे कि उन्हें बीच राह में राजभवन की ओर जाती हुई एक युवती दिखाई दी। युवती थी तो सुन्दर, किन्तु उसकी देह तीन जगह से टेढ़ी थी। इसलिये, उसका नाम सैरन्धी थाए फिर भी वह 'कुब्जा' के नाम से पुकारी जाती थी। श्रीकृष्ण ने अपनी रसिकता के कारण उससे पूछा: –

का त्वं वरार्वेतादुहानुलेपनं
कस्यांगने वा कथयस्व साधु न:।
देह्यावयोरंगविलेपमुत्तमं
श्रेयस्तस्ते न चिराद् भविष्यति ।। [1]

अर्थात् हे सुन्दरी ! तुम कौन हो? यह चन्दन किसके लिये ले जा रही हो ! कल्याणी! हमें सब बात सच सच बता दो। यह उत्तम चन्दन और यह अंगराग हमें भी दो। इस दान से शीघ्र ही तुम्हारा परम कल्याण होगा।

कुब्जा ने कहा– हे श्याम सुन्दर! मैं कंस की प्रिय दासी हूँ। मेरा नाम कुब्जा है। मैं राजा के यहाँ चन्दन, अंगराग तैयार करने का काम करती हूँ। मेरे तैयार किये हुए चंदन और अंगराग कंस को बहुत प्रिय हैं। परन्तु आप दोनों से बढ़कर इस अंगराग का उत्तम पात्र मेरी दृष्टि में दूसरा कोई नहीं है। श्रीकृष्ण के सौन्दर्य को देखकर कुब्जा उन पर मुग्ध हो गई। उसने दोनों

भाइयों को वह सुन्दर गाढ़ा अंगराग दे दिया। तब श्रीकृष्ण ने अपने साँवले शरीर पर पीले रंग का और बलराम ने अपने गोरे शरीर पर लाल रंग का अंगराग लगाया। दोनों ने अपने नाभि से ऊपर के भाग में अंगराग लगाया और वे दोनों सुशोभित होने लगे। श्रीकृष्ण कुब्जा पर अत्यन्त प्रसन्न हुए। उन्होंने अपने चरणों से कुब्जा के दोनों पैर दबा लिये और हाथ ऊँचा करके दो अँगुलियाँ उसकी ठोड़ी में लगाई तथा उसके शरीर को थोड़ा ऊपर की ओर तनिक उचका दिया। उचकाते ही कुब्जा के सारे अंग सीधे और समान हो गये। कुब्जा तब एक बहुत ही सुन्दर युवती बनकर शोभा पाने लगी। श्रीकृष्ण ने तब रंगशाला में पहुँचकर धनुष–यज्ञ को सम्पन्न किया।

नारी–जीवन के उत्थान में श्रीकृष्ण की इस प्रकार सहज सहानुभूति देखी जाती है। उन्होंने अपनी जीवन लीलाओं में हजारों–हजारों गोपियों को उनके पुरुषों की रूढिगत पराधीनता से इसीलिये मुक्ति भी दिलाई थी और उन्हें उन्मुक्त प्रेम करने की स्वतंत्रता प्रदान की थी।

भागवत की एक और घटना–एक इसी तरह की सुखद–सुन्दर घटना का और उल्लेख श्रीमद्भागवत में हुआ है। यह घटना नारी–जीवन के व्यक्ति स्वातंत्र्य को लेकर मानी जा सकती है। एक दिन यमुना–तट के उपवन में गौएँ चराते समय ग्वाल–बालों को बड़ी भूख सताने लगी। उन्होंने श्रीकृष्ण के समीप जाकर कहा प्रभो! हमारी क्षुधा शान्त करने का कोई उपाय कीजिये। श्रीकृष्ण ने उन्हें ब्रह्मवादी स्वर्गकामी ब्राह्मणों के यज्ञ में अन्न माँगने के लिये भेजाए परन्तु वहाँ उनकी बात किसी ने नहीं सुनी। वे निराश लौट आये। तब श्रीकृष्ण ने कहा– तुम लोग उनकी पत्नियों के पास जाओ और मेरा नाम लेकर भोजन माँगो। ग्वाल–बालों ने ऐसा ही किया। श्रीकृष्ण दर्शन के लिये सदा उत्सुक रहने वाली उन देवियों ने ग्वाल–बालों की बात सुनकर बड़े हर्ष का अनुभव किया और तरह–तरह के स्वादिष्ट भोजनों की थाली सजाये वे स्वयं उस स्थान पर गयींए जहाँ श्रीकृष्ण विराजमान थे। श्रीकृष्ण ने उनका स्वागत करते हुए कहा :–

स्वागतं वो महाभागा आस्यतां करवाम किम।
यन्नो दिदृक्षया प्राप्ता उपपन्नमिदं हि वः ।।
नन्वद्धा मयि कुर्वन्ति कुशलाः स्वार्थदर्शिना: ।
अहेतुक्यव्यववाहितां भक्तिमात्मप्रिये यथा।।[2]

श्रीकृष्ण ने कहा कि हे देवियो ! तुम्हारा स्वागत है। तुम लोग हमारे दर्शन की इच्छा से यहाँ आई होए यह तुम्हारे जैसे प्रेमपूर्ण हृदय वालों के योग्य ही है। इसमें सन्देह नहीं कि संसार में अपनी सच्ची भलाई को समझने वाले जितने भी बुद्धिमान पुरुष हैंए वे अपने प्रियतम के समान ही मुझसे प्रेम करते हैंए जिसमें किसी प्रकार की कामना नहीं रहती– जिसमें किसी प्रकार का व्यवधानए संकोचए छिपावए दुविधाए या द्वैत नहीं होता। प्राणए बुद्धिए मनए शरीरए स्वजनए स्त्रीए पुत्र और धन आदि संसार की सभी वस्तुएँ जिसके लिये और जिसकी संनिधि से प्रिय लगती हैं– उस आत्मा सेए परमात्मा सेए मुझ श्रीकृष्ण से बढ़कर और कौन प्यारा हो सकता है? इसलिये तुम्हारा आना उचित ही है। मैं तुम्हारे प्रेम का अभिनंदन करता हूँए परन्तु अब तुम लोग मेरा दर्शन कर चुकीं। अबअपनी यज्ञ शाला में लौट जाओ। तुम्हारे पति ब्राह्मण गृहस्थ हैं। वे तुम्हारे साथ मिलकर ही अपना यज्ञ पूर्ण कर सकेंगे। यद्यपि यज्ञ–पत्नियों ने श्रीकृष्ण की सेवा छोड़कर यज्ञ शाला में लौटना स्वीकार नहीं कियाए किन्तु श्रीकृष्ण के अनुरोध को भी वे मना नहीं कर सकीं और अन्ततः यज्ञ–शाला में लौट गईं।

नारी की सात विभूतियाँ –नारी जाति के उत्थान को लेकर श्रीकृष्ण ने अपने दार्शनिक चिन्तन में भी किसी तरह की कसर नहीं छोड़ी। वे गीता में नाना विभूतियों की जानकारी देते हुए स्त्री–विभूतियों की भी गणना कराते हैं। उन्होंने सात विभूतियाँ बताते हुए कहा है– कीर्तिः श्रीर्वाक् च नारीणां स्मृतिर्मेधा धृतिः क्षमा। ये सात स्त्री–विभूतियाँ हैं। कहा गया है कि स्त्री में ये सात गुण अपेक्षित हैं। तभी स्त्री का जीवन विकसित होगा। इन सात विभूतियों के नाम की सात स्त्रियाँ हो गई हैं। कीर्ति दक्ष प्रजापति की पुत्री और अंगिरा की पत्नी थी। उसने भारत में महान् सांस्कृतिक कार्य किया है। श्री भृगु और ख्याति की पुत्री थी। उसका विष्णु के साथ विवाह हुआ था। वह स्वतंत्र और तेजस्वी विचार वाली स्त्री थी। स्मृति दक्ष प्रजापति की पुत्री और अंगिरस की पत्नी थी। मेधा भी दक्ष की कन्या और धर्म नामक ऋषि की पत्नी थी। धृति मन्यु नामक ऋषि की और क्षमा पुलह ऋषि की पत्नी थी।

श्रीकृष्ण की आठ पटरानियाँ–श्रीकृष्ण के प्रति जिन गोपियों की दिव्य रति थी तथा सोलह हजार गोपियों की लौकिक दाम्पत्य रति थीए उनका श्रीकृष्ण के हृदय में यथोचित स्थान रहा। श्री राधा का दिव्य प्रेम भी श्रीकृष्ण के प्रति अपना अपूर्व स्थान रखता है। श्रीकृष्ण के प्रति चाहे आठ परिणीता पटरानियों का दाम्पत्य प्रेम रहा हो अथवा सोलह हजार गोपियों की लौकिक रति रही होए जन–भावनाओं में दोनों का समान आदरभाव रहा है। महाभारत में इन आठ पटरानियों के जो भवन निर्मित हुए हैंए उनके नाम उनकी विशेषताओं के साथ दिये गये हैं। यथा:–

मेरोरिव गिरेः शृंगमुच्छ्रितं कांचनायुतम।
रुक्मिण्याः प्रवरो वासो विहितः सुमहात्मना ।।
सत्यभामा पुनर्वेश्म सदा वसति पाण्डुरम् ।
विचित्रमणिसोपानं यं विदुः शीतवानिति ।।
स च प्रासादमुख्योऽत्र जाम्बवत्या विभूषितः ।
जाम्बूनदप्रदीप्ताग्रः प्रदीप्तज्वलनोपमः ।।
सागरप्रतिमोऽतिष्ठन्मेरुरित्यभिविश्रुतः।
तस्मिन्गान्धारराजस्य दुहिता कुलशालिनी ।।[3]

अर्थात् इन राजप्रासादों का निर्माण मुख्यतः विश्वकर्ता ने कराया है। रुक्मिणी का राजप्रासाद मेरु पर्वत की तरह ऊँचे शिखर वाला है। सत्यभामा का महल सफेद रंग का है। उसमें मणि–जटित सोपान हैं। जाम्बवती का राजमहल कैलाश शिखर के समान है। वह जाम्बूनद सुवर्ण के समान दमकता है। गान्धार राजा की कन्या सुकेशी का महल मेरु के समान दिखाई देता है। महारानी सुप्रभा का राजप्रासाद 'पद्मकूट' के समान जाना जाता है। महारानी लक्ष्मणा का महल सूर्यप्रभ नाम से प्रसिद्ध है। पटरानी मित्रवृन्दा सुदत्ता देवी का राजप्रासाद केतुमान नाम से जाना जाता है। इन सबसे अलग भगवान श्रीकृष्ण का राजप्रासाद विरज नाम से प्रसिद्ध है, जो उनके निवास का खास महल है। राजप्रासादों का यह वर्णन श्रीकृष्ण के लौकिक जीवन के सुख–साधन का चित्रण करता है। इस वर्णन से श्रीकृष्ण के लौकिक विवाहों की पुष्टि होती है।उनके प्रत्येक विवाह में उनके पौरुष की भूमिका का भी उचित निदर्शन प्राप्त होता है। यहाँ उनके पूरे गार्हस्थिक परिवेश का चित्रण मिलता हैए जो किसी राजसी ठाठ–बाट से कम नहीं है।

नारी–जीवन में गाय की महत्ता –नारी–जीवन की प्रेमाभिव्यक्ति में श्रीकृष्ण के पशु–प्रेम में गो–प्रेम का भी अत्यन्त महत्त्व है। गोवर्धन पर्वत के नामकरण में ही गो वंश के संरक्षण एवं अभिभावन का अर्थ निहित है। गोवर्धन पर्वत की पूजा को लेकर इन्द्र उत्सव की जो कथा प्रचलित हैए उसका अपना महत्तव रहा होगा, किन्तु इन्द्र की परम्परागत मान्यता का उन्मूलन कर

ब्रजभूमि में गो-वंश की प्रतिष्ठा करना इस कथा का मुख्य उद्देश्य माना जा सकता है और उसमें भी पशु-गत नारी-जीवन को प्रतिष्ठापित किया गया है।

गो-प्रेम की अभिव्यक्ति में भगवान श्रीकृष्ण ने गीता के विभूतियोग नामक दसवें अध्याय में अग्नि को कामधेनु के रूप में प्रस्तुत किया है। श्रीकृष्ण का अपने लिये यह कामधेनु कथन उन्हें भक्तों की प्रत्येक कामना को पूर्ण करने वाला बताता है-

आयुधाना-महं वज्जं धेनूनामस्मि कामधुक् ।

महाभारत की विजय : दुर्गा की स्तुति – नारी जाति के महत्त्व के प्रतिपादन में श्रीकृष्ण का यह प्रयास भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं माना जा सकता कि पाण्डवों को विजय दिलाने में सबसे पहले श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा था कि युद्ध आरम्भ करने से पूर्व तुम दुर्गादेवी की स्तुति करना। श्रीकृष्ण का आदेश पाकर अर्जुन ने दुर्गा स्तुति की जो प्रस्तुति कीए उसमें कहा गया कि हे दुर्गे! मैंने विशुद्ध हृदय से तुम्हारी स्तुति की है। अत: कृपाकर आप मुझे विजय अवश्य प्रदान करें।श्रीकृष्ण का अर्जुन को दिया गया यह परामर्श भी नारी जाति के सामाजिक मूल्य की महत्ता को प्रकट करता है।

आधुनिक नारी जीवन एवं कृष्ण की मान्यतायों से संबंध – लौकिक संस्कृत साहित्य की प्रारम्भिक रचनाओं में उपजीव्य ग्रन्थ के रूप में तीन महत्त्वपूर्ण कृतियाँ प्राप्त होती हैं- वाल्मीकि रामायण, महाभारत और पुराणों में सर्वश्रेष्ठ 'श्रीमद्भागवत'। इनमें दो अन्तिम ग्रन्थ वेदव्यास प्रणीत बताये जाते हैं। वेदव्यास रचिततो 'महाभारत' भी है, किन्तु ऐसा कहा जाता है कि महाभारत की रचना के अनन्तर वेदव्यास को आत्मसन्तुष्टि नहीं हुई थी, यद्यपि वे महाभारत जैसे एक विशाल ग्रन्थ का प्रणयन कर चुके थे और जिसके लेखन का कार्य गणेश को करना पड़ा था। वेदव्यास का अपने सृजन के क्षेत्र में जिस आत्मपरितोष का अभाव बताया जाता रहाए उसकी पूर्ति श्रीमद्भागवत की विषय-वस्तु के अध्ययन-अनुशीलन से जानी जा सकती है। श्रीमद्भागवत में जिस विषय-वस्तु का प्रतिपादन हुआ है, उसमें श्रीकृष्ण की लीलाओं का जहाँ विशेष कथन हैए वहाँ राक्षसों के संहार का तथा ब्रजभाव की प्रेम-पूर्ण कथाओं का अधिक विस्तार के साथ वर्णन हुआ है। वस्तुत: गोपियों का जो उत्सव वेदव्यास के हृदय से प्रस्फुटित हुआ है, उसका नारी-जीवन के महत्त्व की दृष्टि से पर्याप्त महत्त्व है। प्रतीत होता है कि श्रीमद्भागवत की रचना के बाद जो मानव जीवन में परिवर्तन आया, वह नारी-जीवन की उन्नति को लेकर हुआ है। यहाँ आकर न केवल द्रौपदी के प्रतिशोध की आग का परिशमन होता देखा जाता हैए बल्कि कुन्ती की मनोव्यथा एवं उत्तारा के दु:ख-दर्द का परिमोचन भी होता देखा जाता है। लगता है कि तब से नारी-जीवन में एक अतुलनीय सांस्कृतिक बदलाव ही आ गया है। श्रीमद्भागवत में श्रीकृष्ण का नारी-जीवन को लेकर पक्षधर बनना एक युग परिवर्तन के रूप में देखा जाता है। पुरुष का अहंकार यहाँ से क्षीण होता चला गया और नारी की प्रतिष्ठा ऊपर उठती देखी गई। मेरा यह मानना है कि जबकि नारी आज भी पुरुष के अहंकार से दबी हुई है और पुरुष उस पर कृपा कर उसे समान अधिकार देने का ढोंग रच रहा हैए श्रीकृष्ण की नारी के जीवन के साथ जो सहानुभूति रही हैए उस पर आज इस देश की चिन्तन-धारा को मोड़ना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्रीमदभागवत, 10.42.2
2. श्रीमदभागवत, 10.23.25-26
3. महाभारत सभापर्व, अध्याय 38

****